भारतीय संगीत में आध्यात्मिकता

डॉ. हरविंदर शर्मा
प्रिंसिपल, राजकीय पी.जी.कालेज, कालका, हरियाणा

भारतीय संगीत मूल रूप में ही आध्यात्मिक संगीत है। भारतीय संगीत को ईश्वर प्राप्ति का मार्ग माना है तो कहीं साक्षात ईश्वर माना गया है। अध्यात्म अर्थात व्यक्ति के मन को ईश्वर में लगाना व व्यक्ति को ईश्वर का साक्षात्कार कराना अध्यात्म कहलाता है संगीत को अध्यात्मिक अभिव्यक्ति का साधन मानकर संगीत की उपासना की गई है। संगीत को ईश्वर उपासना हेतु मन को एकाग्र करने का सबसे सशक्त माध्यम माना गया है। वेदों में उपासना मार्ग अत्यंत सहज तथा ईश्वर से सीधा सम्पर्क स्थापित करने का सरल मार्ग बताया है। संगीत ने भी उपासना मार्ग को अपनाया है।

भारतीय संस्कृति सुजलाम, सुफलाम एवं शस्यश्यामलाम जैसी विशेषताओं से विश्व में प्रसिद्ध है। और आध्यात्मिकता भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी एवं मूल विशेषता है। भारत का इतिहास इस बात का साक्षी रहा है कि आज भारतीय संस्कृति जीवित है। भारतीय संस्कृति आज जीवित है वह आध्यत्मिक भावना और आस्था के कारण है। भारत पर बार–बार आक्रमण होने के कारण भारतीय संस्कृति का ह्रास होने पर भी वह पुनः प्रतिष्ठित और विकसित हुई है। यहां यह कहना आवश्यक होगा कि भारतीय संस्कृति के उत्थान में संगीत ने प्रमुख भूमिका निभाई है।

भारतीय संगीत का उदेष्य मानव की चंचल वृतियों को शांत करना, ईश्वरीय भावना को उन्नत करना, परमानन्द तथा विश्व कल्याण अर्थात सर्वे भवन्तु सुरवीना व वसुधैव

कटुम्बकम् की भावना को सृदृढ़ करना है। भारत के ऋषि मुनियों ने संगीत को ईश्वर प्राप्ति का सबसे उत्तम तथा सरल साधन माना है। इसलिए कहा भी गया है :–

वीणा वादन तत्वक्षः श्रुति जाति विशारदः।
तालज्ञश्या प्रयासेन मोक्षमार्गं निगच्छतिः।।

अर्थात : वीणा वादन करने वाला, श्रुति व जाति अर्थात स्वरों को जानने वालो तथा ताल वादन के अभ्यास में प्रयत्नशील व्यक्ति मोक्षमार्ग की ओर बढ़ जाता है।

भारत में आनन्द व परमानन्द की प्राप्ति हेतु संगीत का प्रयोग दार्शनिकों, योगियों ओर भक्तों ने किया है। आम जनता ने भी संगीत को धार्मिक व सामाजिक उत्सवों तथा व्यक्तिगत मनोरंजन का साधन बनाया। लेकिन इन स्तरों में संगीत का लक्ष्य आध्यत्मिकता ही रहा। संगीत गायन वादन व नृत्य का समावेश है। गायन, वादन और नृत्य का प्रधान लक्ष्य है। आत्मसन्तोष, आत्म–आनन्द व परमानन्द की प्राप्ति कराना। संगीत इस चरम आनन्द और पूर्ण पार्थिव अवस्था का अनुभव कराता है। संगीत का ध्येय भव–बाधाओं से मुक्ति, आत्मा का परमात्मा से मिलन, परमशक्ति तथा मोक्ष प्राप्त करना ही मुख्य ध्येये माना गया है। संगीत में ईश्वर से साक्षात्मकार करने की असीम शक्ति है। जिसका अनुभव भारत के ऋषि–मुनियों व योगियों ने किया है।

संगीत मानव की चंचल मनवृतियों को नियंत्रित करता है। संगीत के स्वर व लय मन को एकाग्रत करके इतना अधिक लीन तथा स्थिर कर देते हैं कि हृदय की समस्त चंचल वृतियां शांत होकर, आत्मा को परमात्मा में लीन करा देती है। भारत के गायकों, वादकों और नर्तकों ने संगीत की आत्मा को पहचाना है। जीवन रूपी संगीत ही नाद

ब्रह्म व मां सरस्वती की वीणा है। जिसके स्वरों में विष्व के आनन्द की समस्त धाराएं मूर्त रूप ग्रहण करती है। भारतीय संगीत में सात विशिष्ट स्वर हैं। सा, रे, ग, म, प, ध, नि । इन सात स्वरों के विभिन्न प्रकारके समायोजन से विभिन्न रागों के रूप बने और इन रागों के गायन वादन में उत्पन्न विभिन्न ध्वनि तरंगों का परिणाम मानव, पशु, प्रकृति सब पर पड़ता है इसका भी बहुत सूक्ष्म निरीक्षण हमारे यहां किया गया है। ऐसे ही कुछ उदाहरण यहां प्रस्तुत हैं।

पहला उदाहरण–प्रसिद्ध संगीतज्ञ पं. ओंकार नाथ ठाकुर 1933 में फ्लोरेन्स (इटली) में आयोजित अखिल विश्व संगीत सम्मेलन में भाग लेने गए। उस समय मुसोलिनी वहां का तानाशाह था। उस समय में मुसोलिनी से मुलाकात के समय पंडित जी ने भारतीय रागों के महत्व के बारे में बताया। इस पर मुसोलिनी ने कहा, मुझे कुछ दिनों से नींद नहीं आ रही है। यदि आपके संगीत में कुछ विशेषता हो तो बताइए। इस पर पं. ओंकार नाथ ठाकुर ने तानपुरा लिया और राग पूरिया गाने लगे। कुछ समय के अंदर मुसोलिनी को प्रगाढ़ निद्रा आ गई। बाद में उसने भारतीय संगीत की भूरि–भूरि प्रशंसा की तथा रॉयल एकेडमी ऑफ म्यूजिक के प्राचार्य को पंडित जी के स्वर एवं लिपि को रिकार्ड़ करने का आदेश दिया।

दूसरा उदाहरण – पांडिचेरी स्थित श्री अरविंद आश्रम में श्रीमां ने एक प्रयोग किया। एक मैदान में दो स्थानों पर एक ही प्रकार के बीच बोये गये तथा उनमें से एक के आगे पॉप म्यूजिक बजाया और दूसरे के आगे भारतीय संगीत। परन्तु आश्चर्य यह था कि जहां पॉप म्यूजिक बजता था वह पौधा असंतुलित तथा उसके पते कटे फटे थे। जहां

भारतीय संगीत बजता था, वह पौधा संतुलित तथा उसके पते पूर्ण आकार के विकसित थे। यह देख कर श्री माँ ने कहा, दोनों संगीतों का प्रभाव मानव के आन्तरिक व्यक्तित्व पर भी उसी प्रकार पड़ता है। जिस प्रकार इन पौधों पर दिखाई देता है।

हमारे यहां विभिन्न रागों के गायन व वादन के परिणाम के अनेक उल्लेख प्राचीन काल से मिलते हैं। सुबह, शाम, हर्श, शोक, उत्साह, करूणा व भिन्न–भिन्न प्रसंगों के भिन्न–भिन्न राग है। अलग अलग रागों का प्रभाव भी अलग–अलग है जैसे दीपक राग से दीपक जलना और मेघ मल्हार से वर्षा होना आदि उल्लेख मिलते हैं।

संगीत आत्मा की सात्विक खुराक है। ब्रह्म के परम पवित्र प्रणव नाद ओंकार (ऊँ) की उत्पत्ति सृश्टि के साथ मानी गई है। भारतीय संगीत के सात स्वर न केवल हमारी शारीरिक तंत्रिकाओं को प्रभावित करते हैं, बल्कि पाशविक वृतियों का दमन भी करते हैं और हमारे अन्दर अध्यात्मिक एवं सात्विक विचारों का संचार भी करते है। भारत के योगियों ने सात स्वरों की उत्पति मानव शरीर के सात यौगिक चक्रों से मानी है। जब स्वरों को गाना बजाया जाता है तो स्वरों में जो आन्दोलन अलग–अलग निश्चित संख्या में होता है उनके कंपन का प्रभाव मानव शरीर के यौगिक चक्रों पर पड़ता है इसी स्वर उपासना से मनुष्य आहत नाद से अनाहत नाद की ओर अग्रसर होता है। योगियों की भाषा में संगीत नाद योग है।

सात यौगिक चक्र मानव शरीर के सात स्थानों में सर्प की भांति कुंडली मारे हुए है। सात यौगिक स्थानों से विकसित शक्तियों को योगी एकत्र करके जैसे जैसे उर्ध्वगामी करते हैं वैसे वैसे शक्ति मनुष्य के नीचे के केन्द्रों से ऊपर के केन्द्रों में चढ़ती जाती है।

Pratibha Spandan

अंततः सप्तचक्र भेदन होने पर शिव शक्ति अर्थात आध्यात्मिक शक्ति मेल हो जाता है जिन सप्त चक्रों से सप्त स्वरों की उत्पत्ति मानी है वह है, या स्वर की उत्पत्ति मूलाधार चक्र से मानी गई है अर्थात् सा का केन्द्र मूलाधार है।

मूलाधार चक्र का हमारे शरीर में गुदा स्थान है। जब सा की आन्दोलन अर्थात कंपन बढ़ता है तो ऋषभ (रे) स्वर की उत्पति होती है। जिसका केन्द्र स्वाधिष्ठान चक्र माना गया है। रे से रस की उत्पति होने लगती है। स्वाधिष्ठान का स्थान शरीर में जननेन्द्रिय के ठीक ऊपर और जधन अस्थि पर स्थिर है। गंधार स्वर की उत्पति मणिपुर चक्र से होती है। गंधार स्वर से ही अग्नि तत्व की जागृति होती है मूल नाद ब्रह्म की उत्पति मणिपुर चक्र से ही होती है। मणिपुर चक्र का स्थान शरीर में नाभि में होता है। मध्यम (म) स्वर का उत्पत्ति स्थान अनाहत चक्र कहा गया है। जिसका स्थान वक्षस्थल के मध्य में रीढ़ की हड्डी के अन्दर है।

अनाहत चक्र शरीर को दो भागों में बांटता है। मध्यम स्वर एक लय बनाता है यह लय मंकार कहलाती है। जिसके कारण अनाहत नाद की अनुभूति होने लगती है। पंचम स्वर का उद्गम विशुद्धि चक्र से होता है। जिसका स्थान गले में (थायराइज के पास) है। प अर्थात प्राण, विशुद्धि चक्र में 16 छोटे–छोटे पंपल होते है। जो प्राण वायु को नियंत्रित करते हैं। गायन संगीत में रियाज की आवश्यकता होती है। रियाज से ये पंपल संस्कारित होते हैं और पंचम स्वर की उत्पति और निशुद्धि चक्र की जागृति करते हैं। पंचम स्वर की उत्पति होने के बाद मनुष्य ध्यान की ओर बढ़ जाता है, उसी ध्यान में जब वह लीन हो जाता है तो आज्ञा चक्र से धेवत (ध) स्वर की उत्पति होती है और व्यक्ति

Pratibha Spandan

अन्तर्मुखी हो जाता है। आज्ञाचक्र का स्थान दोनों भोंहों के बीच में है। जहां पर तिलक लगाया जाता है। यहां पर भगवान शिव (रूद्र ग्रंथि)का वास कहा जाता है। इसी धैवत के ध्यान से अर्थात आज्ञा चक्र की जागृति से सूरदास जैसे महान कवि व संगीतज्ञ हुए हैं। सातवां स्वर निषाद है जिसकी उत्पति सहस्त्रार चक्र से हुई है। सहस्त्रार चक्र का स्थान सिर के ऊपरी भाग जहां पर चोटी रखी जाती हैं। निशाद की उपासना से व्यक्ति निरलिप्तत्ता की अवस्था में पहुचता है। तभी कहा भी गया है, 'निरलिप्त समाधिनाः' अर्थात् जो व्यक्ति संसारिक भोगों को छोड कर समाधि की अवस्था में पहुच जाता है। इस अवस्था में पहुंचने के ताल सहायक होता है जब ताल में कंपन पैदा होता है तो मूलाधार चक्र जागृत होता है और यही विशिष्ट कंपन सभी चक्रों को जागृत करके मनुष्य निरलिप्त अवस्था अर्थात मोक्ष मार्ग की बढ़ जाता है।

स्थूल शरीर में तीन ग्रंथियां (अतीन्द्रिया) हैं। ये ग्रंथियां ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र के नाम से जानी जाती है और ये चेतना के उस स्तर की प्रतीक हैं जहां माया, अज्ञान एवं सांसारिकता के प्रति आसक्ति अत्यंत प्रबल रहती है मूलाधार चक्र के स्थान पर ब्रह्मा ग्रंथि का निवास है जहां से षडज स्वर की उत्पति होती है। इसका संबंध शारीरिक भोग। भौतिक व उपलब्धियों से है। इस ग्रंथि में तमोगुण प्रबल रहता है। विष्णु ग्रंथि अनाहत चक्र को नियंत्रित करती है। अनाहत चक्र से ही मध्यम (म) स्वर की भी उत्पत्ति होती है। इसका सम्बध भावात्मक लगाव एक दूसरे के प्रति आसक्ति और आन्तरिक अतीन्द्रिय अनुभवों से होता है यह रजोगुण से संबंधित है। रूद्र ग्रंथि आज्ञा चक्र के क्षेत्र में क्रियाषील रहती है आज्ञा चक्र से ही धैवत स्वर की उत्पति होती है इसका संबंध सिद्धियों अतीन्द्रिय अनुभव तथा एकात्व की भावनाओं से है। इस अवस्था में व्यक्ति को

Pratibha Spandan

अहम् का त्याग करता है। व द्वैत बुद्धि से परे हो जाती है और आध्यात्मिक जीवन की दिषा बढ़ जाता है। इस प्रकार यौगिक क्रियाओं से संगीत के द्वारा परमात्मा से संबंध स्थापित करना संभव है।

सर्वविदित है कि तांडव और लास्य नृत्य के आदि गुरु भगवान षंकर और पार्वती है। नौ लाटव गोपियों के साथ वृदांवन में रास रचाने वाले मुरली मनोहर भगवान कृश्ण तो मानों संगीत के साक्षात अवतार ही हुए हैं। मां सरस्वती को संगीत की देवी कहा गया है और मां सरस्वती की पूजा विद्या व संगीत की देवी के रूप में की जाती है। भक्ति निर्गुण हो या सगुण लक्ष्ण सबका एक ही है। श्रीमदभागवत् में नवधा भक्ति का विधान बताया हैं उसका तात्पर्य भी परमात्मा से संबंध स्थापित करना ही है। भक्ति के कीर्तन सर्वोकृष्ट साधन माना गया है। श्री भद्राटकर ने अपनी पुस्तक 'वैष्णविज्म, रौ विज्म एंड अंडर माइनर रिलीजियस सिस्टमस' में इस बात को स्वीकार किया है कि सर्वप्रथम कीर्तन की सृष्टि चैतन्य महाप्रभु ने की थी। चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथ पूरी में जग–जग कहते व कई बार मूर्च्छित हो जाया करते थे।

सूरदास, तुलसी, मीरा आदि के पास अंतर्दृष्टि थी, जिसके द्वारा उन्होंने परमात्मा के दर्शन किए और जनता को भी कराए। अतः भक्ति संगीत भी भारत व अन्य कई देशों में ईश्वर प्राप्ति का माध्यम रहा है। विष्व का इतिहास साक्षी है कि प्राचीन युग में किसी भी देश का संगीत, चाहे व लौकिक रहा हो या आध्यात्मिक लेकिन वह भक्ति भावना से ओतप्रोत था। संगीत एक अनुभूति है और अनुभूति का संबंध आत्मा से है। भारतीय दर्शन के अनुसार आत्मा सच्चिदानंदमय है। भारतीय संगीत एक ऐसी आध्यात्मिक शक्ति है जहां सम्पूर्ण सृष्टि ने न केवल भौतिक बल्कि आत्म साक्षात्कारी सुखों की भी अनुभूति की है।

Pratibha Spandan